E-ISSN: 2664-603X
P-ISSN: 2664-6021
IJPSG 2024; 6(1): 346-348
www.journalofpoliticalscience.com
Received: 02-03-2024
Accepted: 06-04-2024

रेखा माथुर
शोधार्थी राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर
राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
रेखा माथुर
शोधार्थी राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर
राजस्थान, भारत

भारत में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के रूप में स्थानीय स्वशासनः ऐतिहासिक सिंहावलोकन

रेखा माथुर

DOI: https://doi.org/10.33545/26646021.2024.v6.i1e.345

सारांश
भारत में स्थानीय स्वायत्त शासन की संस्थाएं अतीत काल से चली आ रही हैं फिर भी नगरी एवं ग्रामीण दोनों ही प्रकार की स्थानीय संस्थाओं का व्यवस्थित आरंभ 19वीं शताब्दी से माना जाता है। इन संस्थाओं के विकास के बीज विद्वानों ने मानव मन की प्रकृति में निहित माने। स्थानीय सरकार को मानव की मनोवैज्ञानिक और व्यावहारिक आवश्यकता के रूप में रेखांकित किया गया है। मानव की सदैव यह इच्छा रही है कि जो भी सरकार हो वह उसके स्वयं के द्वारा शासित और अच्छी सरकार होनी चाहिए। मानव अपनी प्रकृति से तो स्वकेंद्रित होता है। मानव मन की यही इच्छा अतीत काल से स्थानीय संस्थाओं के विकास का अंतरनिहित दर्शन रही है।
पंचायत जिन्हें ग्रामीण स्थानीय प्रशासन की सबसे लोकप्रिय इकाई माना जाता है, बहुत पुरानी संस्थाएं हैं जो अतीत में अपने आप में स्थानीय शासन की सामर्थ इकाइयां हुआ करती थी। प्राचीन काल में इसी पंचायत व्यवस्था के कारण प्रत्येक ग्रामीण समाज अपने आप में एक छोटा सा राज्य था और इसने भारत की जनता को एकता के सूत्र में बहुत अच्छी तरह बांध रखा था।

कूटशब्दः लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण, स्थानीय स्वशासन,प्रत्यायोजन,नगर पंचायत,पंचायत समिति,ग्राम पंचायत,जिला परिषद, वैदिक युग, मनुसंहिता, ग्रामीण,गोप, कोतवाल, मुकदम, आईने–ए–अकबरी

प्रस्तावना
प्रस्तुत शोध पत्र में विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक पद्धति का प्रयोग किया है। इस शोध पत्र के लेखन में विभिन्न स्रोतों का उपयोग किया गया है जिसमें मुख्यतः पत्र पत्रिकाओं में छपे लेख, निबंध लेख,प्रकाशित शोध ग्रंथ तथा विभिन्न इंटरनेट, गूगल, वेबसाइट आदि विवरणों का समावेश है

लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की अवधारणा
लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का उद्देश्य है राजनीतिक प्रक्रिया और निर्णय निर्माण प्रक्रिया के दायरे को व्यापक करना जिससे सहभागिता भागीदारी को व्यापक किया जा सके और शक्तियों का बंटवारा हो सके, जिससे निष्पक्षता जवाबदेहीता तथा उत्तरदायित्व की भावना का विकास हो। शक्ति के स्थानांतरण से शासन में न केवल सहभागिता का विकास होता है बल्कि इसके द्वारा शक्तियों, नीतियों, निर्णयों में उदारता भी आती है। लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण में सरकार के कार्यों में जनता की अधिक से अधिक भागीदारी को सुनिश्चित किया जाता है। यह सभी स्तरों पर समान रूप से पाया जाता है अतः लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का दायरा बहुत व्यापक है। राजनीति में लोकतंत्र के प्रयोग का अभिप्राय केवल राज सत्ता में लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने तक ही सीमित नहीं है,बल्कि यह सरकार के दैनिक कामकाज में लोगों की सहभागीता को बढ़ाने में भी प्रयासरत है। जे.एस.मिल लिखते है कि एक ऐसी सरकार जिसमें सभी लोगों की भागीदारी हो वहीं राज्य की समस्त आवश्यकताओं को पूरा कर सकती है।
यह स्पष्ट है कि लोकतंत्र की अवधारणा में विकेंद्रीकरण का विचार अंतर निहित है। तो क्या विकेंद्रीकरण के साथ लोकतांत्रिक शब्द जोड़ना व्यर्थ है? लेकिन कई विद्वान मानते हैं कि विकेंद्रीकरण के पूर्व लोकतांत्रिक शब्द का प्रयोग निरर्थक नहीं है। वस्तुत लोकतांत्रिक शब्द विकेंद्रीकरण के उद्देश्यों को अभिव्यक्त करता है, जो सत्ता के विकेंद्रीकरण में लोगों के व्यापक, अधिकतम और निकटतम सहयोग की आकांक्षाओं को स्पष्टता प्रदान करता है। लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को स्थानीय स्तर पर जनता का अपने कल्याण की योजनाओं को बनाने तथा मांग करने एवं स्वायत्त पूर्ण उन्हें क्रियान्वित करने के दृष्टिकोण से देखा जाता है।

कई विचारक लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के विचार को प्रत्यायोजन के समान समझ लेते हैं। यद्यपि इन शब्दों में कुछ समानताएं हैं,लेकिन यह दोनों एक दूसरे के समानार्थी नहीं है। प्रत्यायोजन में सत्ता का उच्च अधिकारियों द्वारा अधीनस्थ अधिकारियों को शक्तियों का स्थानांतरण है। अधीनस्थ अधिकारी सत्ता के उपयोग के लिए स्वतंत्र नहीं होता, बल्कि उसकी शक्ति का निर्वहन उच्च अधिकारियों के दिए आदेशों और निर्देशो से होता है। इसके विपरीत लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण में लोगों का अधिकार अंतरनिहित होता है। शक्तियों के हस्तांतरण के साथ–साथ उन्हें उत्तरदायित्व भी सौंप दिए जाते हैं। प्रत्यायोजन के सिद्धांत मे उच्च अधिकारी अपने अधीनस्थ अधिकारी को केवल आदेश प्रेषित करता है उसे कार्य की समस्त जिम्मेदारी उच्च अधिकारी की होती है, जबकि लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण में शक्तियों के हस्तांतरण के साथ–साथ उत्तरदायित्व भी स्थानीय शासन को सौप दिए जाते है। लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण ऐसा सिद्धांत है जो स्थानीय लोगों को मौलिक सत्ता के उपयोग का अधिकार देता है जबकि प्रशासनिक प्रत्यायोजन किसी प्रशासनिक संगठन में प्रशासनिक कुशलता प्राप्त करने का मात्र एक यंत्र है जिसमें अधीनस्थ अधिकारी द्वारा ऐसी सत्ता का उपयोग किया जाता है जो उसे उच्च अधिकारी द्वारा दी जाती है।

भारत में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण

शासन व्यवस्था के रूप में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की अभिव्यक्ति पंचायत व्यवस्था में होती है। प्राचीन भारत में नगरीय प्रशासन के विद्यमान होने का उल्लेख भी मिलता है मेगास्थनीज ने ईसवी पूर्व तीसरी शताब्दी के भारत के एक नगर के शासन का अपने विवरण में उल्लेख किया है उस विवरण से पता चलता है कि प्राचीन काल के नगरी शासन को पांच–पांच सदस्यों की 6 समितियां में विभाजित किया गया था। वैदिक युग में जब नगरों का कोई विशेष स्थान नहीं था ग्रामीण शासन अधिक महत्वपूर्ण माना जाता था। गांव की पंचायत जो गांव के लोगों द्वारा संगठित होती थी, प्रशासकीय और न्याय की कार्यों का निष्पादन करती थी। मनुसंहिता में भी राजा और गांव के बीच संबंधों की चर्चा मिलती है और कौटिल्य के अर्थशास्त्र से यह प्रमाणित होता है कि राज्य ग्रामीण जीवन में न्यूनतम हस्तक्षेप करता था। मौर्य काल में शासन की सुविधा की दृष्टि से प्रांतों को निम्नलिखित प्रकार से विभाजित किया गया था।

- जनपद
- स्थानिक
- द्रोणमुख
- स्वार्वटिक
- संग्रम
- ग्राम

जनपद अथवा जिले का मुखिया स्थानिक कहलाता था। और ग्राम का अधिकारी ग्रामिक के नाम से जाना जाता था। पांच या 10 ग्रामों का अधिकारी गोप कहलाता था। मौर्य काल में चंद्रगुप्त मौर्य ने स्वायत शासन प्रणाली प्रचलित कर शासन के विकेंद्रीकरण की नीति अपनाई। इस काल में नगर का सबसे बड़ा पदाधिकारी नागरिक कहलाता था। वह 'नागरिक' गोप और स्थानिकों की सहायता से नगर का प्रशासन चलता था।

मौर्य काल के पश्चात गुप्त युग में भी स्थानीय शासन की रूपरेखा मौर्य काल जैसी ही प्रचलित थी।

इसके पश्चात राजपूतो के काल में ग्राम पंचायत का महत्व कम हो गया। राजपूत कालीन सामंत न केवल स्थानीय शासन को ही कम महत्व देते थे। अपितु वह केंद्रीय शासन से निरंतर मुक्त होने का प्रयत्न भी करते थे।

भारतीय शासन के मुगल कालीन इतिहास के पन्नों को पलटने से ज्ञात होता है कि इस काल में भी देश में स्थानीय शासन विद्यमान था। मुगल काल में नगर का प्रशासन जिस अधिकारी के द्वारा चलाया जाता था, वह कोतवाल कहलाता था। यह कोतवाल पुलिस संबंधी मामलों,दंड व्यवस्था तथा वित्तीय मामलों में सर्वोपरि सत्ता रखता था। क्षेत्र में शांति और व्यवस्था बनाए रखना अपराधों का पता लगाना सामाजिक कुरीतियों को मिटाना और इसी तरह के स्थानीय मामलों के निष्पादन के लिए वह उत्तरदायी था । ग्रामीण स्थानीय प्रशासन के क्षेत्र में इस काल में गांव शासन की सबसे छोटी इकाई था। जिनका प्रबंध पंचायते करती थी। गांव के तीन महत्वपूर्ण अधिकारियों में मुकदम गांव की देखभाल करता था। चौधरी पंचायत की सहायता से झगड़ा सुजाता था,और पटवारी राजस्व वसूली करता था । प्रत्येक गांव में सुरक्षा की दृष्टि से एक चौकीदार भी नियुक्त होता था। इस काल में स्थानीय प्रशासन के विषय में अबुल फजल कृत आईने–ए –अकबरी में विवरण मिलता है। आईने–ए –अकबरी में नगरीय जीवन और उसके अधिकारियों के विषय में कहा गया है कि कोतवाल के पद पर नियुक्त होने वाले अधिकारी को अनुभवी, कुशल,विचारवान और चतुर होना चाहिए। वह इतना सजग होना चाहिए की नागरिक शांति और सुरक्षा का अनुभव करें और दुष्ट लोग अशांति का। उसे चाहिए कि कस्बों में मोहल्ला टोली का गठन करें जिस मोहल्ले में परस्पर सौहार्द्र बनाए रखने का उत्तरदायित्व दिया जाए। अपने गुप्त चरो के माध्यम से हर तरह की घटना का सावधानी पूर्वक निरीक्षण करें। आईने–ए–अकबरी में तत्कालीन नगरीय प्रशासन और उसके अधिकारियों से जो अपेक्षाएं की गई है उससे यह प्रकट होता है कि जितने भी घटनाक्रम उस समय हुआ करते थे उन सब के नियमन का दायित्व शांतिमय नागरिक जीवन की दृष्टि से नगरीय प्रशासन और उनके अधिकारियों पर छोड़ा गया था। मुगलों के पश्चात भारत में ब्रिटिश शासन स्थापित हुआ जिसके परिणाम स्वरुप स्थानीय प्रशासन को और अधिक प्रशासनिक दृष्टि से महत्व दिया गया। अंग्रेजों ने अपने प्रशासनिक सुविधा के लिए भारत में स्थानीय स्वशासन को सशक्त करने का प्रयास किया। जिसका प्रमुख उद्देश्य राजस्व इकट्ठा करने तथा अपना आधिपत्य स्थापित करने का रहा।

कुछ विशेष परिस्थितियों में केंद्रीय विधान मंडल को राज्य सूची के विषयों पर विधि बनाने का अधिकार प्राप्त था। ऐसा केवल आपात स्थिति में होता था।

गांधी ने प्रचलित लोकतंत्र की कटु आलोचना करते हुए कहा कि मताधिकार पर आधारित लोकतंत्र हो जिसमें बुनियादी स्तर पर प्रत्यक्ष लोकतंत्र तथा ऊपरी स्तर पर अप्रत्यक्ष से चुनी गई संस्था हो। इस प्रकार गांधी ने सत्ता के वास्तविक विकेंद्रीकरण पर आधारित ऐसे लोकतंत्र को अपनाने पर जोर दिया जिसमें लोकतंत्र का अर्थ होगा की निम्न से निम्न तथा उच्च से उच्च व्यक्ति को आगे बढ़ने का अवसर मिले, लेकिन ऐसा अहिंसा से ही होना

गांधी ने अपने अंतिम सार्वजनिक लेख में प्रकाशित किया कि सच्ची लोकशाही केंद्र में बैठे 10 से 20 लोग नहीं चला सकते । लोकतंत्र तो नीचे से गांव के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा चलाया जाना चाहिए।

लोकतंत्र के विषय में पंडित नेहरू का मानना था कि लोकतंत्र केवल राजनीतिक तथा आर्थिक कि नहीं वरन मानसिकता से भी जुड़ा हुआ है अर्थात लोकतंत्र में प्रत्येक व्यक्ति को राजनीतिक तथा आर्थिक क्षेत्र में समानता के अवसर मिलने चाहिए। लोकतंत्र हमारी सामाजिक,आर्थिक,राजनीतिक समस्याओं के समाधान का एक मानसिक दृष्टिकोण है।

राज्य के नीति निर्देशक तत्व में पंचायती राज को समाहित कर इसमें संविधान के अनुच्छेद 40 के भाग चार में रखा गया है

जिसके आधार पर 2 अक्टूबर 1952 में समुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। जिसके तहत ग्रामीण जनता को आर्थिक नियोजन व सामाजिक पुनरुत्थान की राष्ट्रीय योजनाओं से जोड़ा गया।

1956 में बलवंत राय मेहता समिति ने स्थानीय स्वशासन की त्रिस्तरीय रचना की सिफारिश को देश के सामने प्रस्तुत किया। जिसके अंतर्गत ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत खण्ड स्तर पर पंचायत समिति तथा जिला स्तर पर जिला परिषद। इन्हीं सिफारिश के आधार पर राजस्थान में 2 अक्टूबर 1954 को भारत के प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने राजस्थान के नागौर जिले में पंचायती राज का उद्घाटन कर ग्रामीण विकास की शुरुआत की। भारतीय संविधान के द्वारा 1993 में 73 वां और 74 वां संविधान संशोधन अधिनियमों के द्वारा त्रिस्तरीय विधायिका की स्थापना की गई। इन संशोधनों को सकारात्मक कार्यवाही के रूप में देखा गया । भारत में पंचायती राज व्यवस्था को विकेंद्रीकरण के मुख्य यंत्र के रूप में देखा गया। जिससे लोकतंत्र वास्तव में अधिक प्रतिनिधि और जवाबदेय बनने की दिशा में अग्रसर हुआ। सत्ता का विकेंद्रीकरण करके वास्तविक रूप में पिछड़े व दलित वर्गों को शासन में भागीदार बनने के लिए संशोधन पारित करके महिलाओं को पंचायत में एक तिहाई स्थान आरक्षित करके मूल स्तर पर राजनीतिक स्तर में उनकी भागीदारी सुनिश्चित कि ।

स्थानीय स्वशासन की आवश्यकता

लोगों का संगठित समूह जब एक स्थान पर एक निश्चित भौगोलिक सीमा में रहने लगता है तो उसमें एक समुदायिकता और एकता की भावना उत्पन्न हो जाती है। इन लोगों के इस सामूहिक आवास के फलस्वरुप कुछ समस्याएं भी उत्पन्न हो जाती हैं। इन समस्याओं का संबंध नागरिक जीवन के सुविधाओं से होता है, जैसे पानी की व्यवस्था,गंदे पानी के निष्कासन के लिए नालियों का प्रबंध, सड़कों की सफाई, कूड़े करकट का हटाया जाना, सार्वजनिक मार्ग पर प्रकाश की व्यवस्था,महामारियों की रोकथाम प्राथमिक स्वास्थ्य और चिकित्सा व्यवस्था तथा नागरिकों को स्वस्थ पर्यावरण उपलब्ध कराना आदि।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रगति के साथ नागरिकों के जीवनयापन की दैनिक आवश्यकताओं में पर्याप्त परिवर्तन आ गया है इस कारण स्थानीय स्वशासन से उनकी अपेक्षा निरंतर बढ़ रही है। स्थानीय लोगों की बढ़ती हुई स्थानीय आर्थिक सामाजिक आवश्यकताओं और उनसे उत्पन्न समस्याओं को समाधान के लिए एक सशक्त स्थानीय शासन की आवश्यकता निरंतर बढ़ती जा रही है।

राष्ट्रीय सरकार और प्रांतीय सरकार के कार्यों का जो विभाजन संविधान में किया गया है उसे यह स्पष्ट है कि नागरिकों की स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति का दायित्व संविधान निर्माता ने स्थानीय स्वशासन पर छोड़ा है जिसे राज्य सूची का एक विषय बनाया गया है।

स्थानीय स्वशासन का महत्व

आधुनिक युग को नागरिकों की बढ़ती हुई आकांक्षाओं का युग माना जाता है,सभी प्रजातांत्रिक और लोक कल्याणकारी राज्यों में शासन संबंधी कार्यों का इतना अधिक महत्व और विस्तार हो गया है कि केवल केंद्रीय सरकार या राज्य सरकार इन कार्यों का निष्पादन नहीं कर सकती। इसी कारण समस्त लोकतांत्रिक देश में राष्ट्रीय एवं प्रांतीय सरकार उनके कार्य भार को हल्का करने की दृष्टि से स्थानीय स्वशासन के संस्थानों को व्यापक उत्तरदायित्व देती है।स्थानीय स्वशासन के महत्व को निम्न बिंदुओं से अभिव्यक्त किया जा सकता है।

- स्थानीय सरकार प्रजातंत्र का आधार
- लोकतंत्र की पाठशाला
- अच्छे नागरिक जीवन के विकास के लिए अनिवार्य
- नागरिकों को राजनीतिक शिक्षा प्रदान करना
- संघीय एवं प्रांतीय शासन के कार्यभार में सहयोग
- स्थानीय समस्याओं को सुलझाने के लिए स्थानीय परिस्थितियों का ज्ञान आवश्यक
- स्वतंत्र राष्ट्रों की शक्ति का आधार
- सकारात्मक राज्य का मूर्त रूप
- स्थानीय संस्थाएं विकेंद्रीकरण का साधन
- संस्कृति तथा सभ्यता की पोशाक
- स्थानीय सूचना केंद्र
- स्थानीय शासन द्वारा नौकरशाही के दोषों से बचाव

निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि इस प्रकार स्थानीय शासन की संस्थाएं न केवल आधुनिक नागरिक जीवन के लिए अपरिहार्य हैं, अपितु यह प्रजातंत्र की निर्वाहक भी बन गई है विद्वानों के इस मत में कोई अतिशयोक्ति प्रतीत नहीं होती कि स्थानीय संस्थाओं के बिना न तो लोकतंत्र के आदर्शों को साकार किया जा सकता है और ना ही किसी स्थाई प्रजातांत्रिक राज्य का उनके बिना विकास संभव है। आधुनिक अनुसंधानों ने यह सिद्ध कर दिया है कि समस्त विकास योजनाओं के लक्षण की क्रियान्विति और सफलता नागरिकों की समस्त विकास योजनाओं के लक्षण की क्रियान्वित्ती और सफलता नागरिकों की अधिकतम सहभागिता पर निर्भर करती है, जो स्थानीय संस्थाओं के माध्यम से स्वाभाविक रूप से प्राप्त की जा सकती है। लॉर्ड ब्राइस का यह कहना सही है कि स्थानीय संस्थाएं नागरिकों में उनके सामान्य कार्यों के संदर्भ में एक सामान्य रुचि उत्पन्न कर देती है जिससे नागरिकों में परस्पर सौहार्द मेल–मिलाप,सामाजिक न्याय प्रियता और सामान्य कार्यों के प्रति सामान्य समझ जैसे गुणों का विकास अपने आप हो जाता है। इसीलिए आधुनिक विशाल राज्यों में नागरिकों की समुदाय की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सक्रिय स्थानीय संस्थाओं की आवश्यकता स्वयं सिद्ध है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. इकबाल नारायण डेमोक्रेटिक डिसेंट्रलाइज नेशन थे आइडिया द इमेज एंड रियलिटी संकलन आर.बी जैन
2. डॉ.शर्मा अशोक, भारत में स्थानीय शासन ट्रस्ट 96
3. सिद्धराज ढढढा 'मेरे सपनों का भारत' सर्व सेवा संघ प्रकाशन वाराणसी,1951 पृष्ठ 18–19
4. केविंस नॉर्मन 1986 टॉक्स विद नेहरू वन डे कंपनी न्यूयॉर्क 1959 पृष्ठ 18 –19
5. एम. ए. मोबालिस एवम खान, थ्योरी ऑफ़ लोकल गवर्नमेंट, नई दिल्ली स्टर्लिंग 1983, पृष्ठ 3
6. भारत का संविधान अनुच्छेद 40
7. भारत में पंचायती राज डॉक्टर आर.पी जोशी,डॉ रूप मंगलानी
8. भारत का संविधान 73 वां संविधान संशोधन अधिनियम अनुच्छेद 243
9. राजस्थान पंचायती राज अधिनियम 1994 धारा 2
10. श्री राम माहेश्वरी, लोकल गवर्नमेंट इन इंडिया, ओरियंट लोंगमैन, दिल्ली 1976 पृष्ठ 16